ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-5* Issue-7* October-2020
Anthology : The Research

भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की भूमिका

Role of Cultural Nationalism in the Indian Independence Movement

Paper Submission: 12/10/2020, Date of Acceptance: 20/10/2020, Date of Publication: 21/10/2020

अम्बरीश मिश्र
प्रवक्ता,
इतिहास विभाग,
भवानी प्रसाद पाण्डेय पी0जी0 कालेज, करीमनगर, गोरखपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

भारत की राजनीतिक राष्ट्रीयता, सांस्कृतिक राष्ट्रीयता का ही विकसित रूप है। हमारे देश के महापुरूषों जैसे बाल, पाल, लाल सभी ने जन–जन में देशप्रेम और राष्ट्रवाद का भाव भरने के लिए उबलता हुआ प्रेम लेकर पैदा हुए थे इसीलिए ये लोग इस देश के नवोत्थान तथा राष्ट्रवाद के उन्नयन के इतिहास में चिरस्थायी है।

भारत में पनप रही शुंकाल, मानकिसता, विवेकहीन चरित्र, धर्मान्धता, कट्टरता एवं जड़ता की प्रवृत्ति का समापन इसी सांस्कृतिक राष्ट्रवाद द्वारा सम्भव हो सका। जिससे भारतीय जनमानस की वृत्ति जिज्ञासु एवं विश्लेषणात्मक हुई जिसने परतंत्रता की वेड़ियों से भारत को स्वतंत्रता दिलाई। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद ने ही लोगों में यह भावना जागृति की जैसा अर्जुन तिवारी ने लिखा है– ''कि यदि स्वराज्य लेना है तो अपनी जान चिड़ियों से भी सस्ती करनी होगी, क्योंकि व्यक्ति के प्रत्येक कर्म राष्ट्रीयता की अभिव्यक्ति है। पराधीनता से मुक्ति की भावना, भारतीय सांस्कृतिक सामाजिक परम्परा से प्राप्त मूल्य दृष्टि तथा लोक कल्याण की चेतना ही सच्ची राष्ट्रीयता है।''[1]

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की राष्ट्रीयता, भारत देश, भारतवासी तथा भारतीय संस्कृति, त्रिवेणी का ही पर्याय था। राष्ट्र गाँव और शहर से नही बनता, राष्ट्र तो अपने निवासियों के त्याग तप की रगड़ से चमकती, देशभक्ति, स्वभाषा और देशभिमान से बनता है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के कारण ही भारत में आधुनिक युग का अरुणोदय हुआ तथा अतीत की थाती को संरक्षण मिला तथा सुष्क जनमानस में राष्ट्रभाव के ज्ञान का स्फुटन हुआ।

अर्जुन तिवारी ने सत्य ही लिखा है– कि फिरंगियों की प्रताड़ना के कारण ही क्रांतिकारियों का एक समूह उठ खड़ा हुआ जिनके द्वारा विप्लव का राग सुनाया गया। महापुरूषों के पत्र तथा दस्तावेजों से प्रेरणा लेकर भारतीयों ने सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के वशीभूत होकर पुनर्जागरण की अग्नि को प्रज्जवलित कर दिया।[2]

India's political nationality is a developed form of cultural nationality. The great men of our country like Baal, Pal, Lal all were born with a boiling love to instill patriotism and nationalism in the people, hence these people are enduring in the history of the revival of this country and the elevation of nationalism.

This cultural nationalism was able to end the trend of conspiracy, mentalism, irrational character, bigotry, bigotry and inertia flourishing in India. Due to which the attitude of the Indian public became inquisitive and analytical, which gave India freedom from the altars of subservience. Cultural nationalism has awakened the sentiment in the people as Arjun Tiwari has said - "If you want to take Swarajya, then you have to make your life cheaper than the birds, because every act of a person is an expression of nationality." True nationality is the spirit of freedom from subjugation, the values gained from the Indian cultural social tradition and the consciousness of public welfare. "1

The nationality of cultural nationalism was synonymous with Triveni, the country of India, Indians and Indian culture. The nation is not made up of villages and cities, the nation is made of glowing, patriotism, self-language and patriotism by the rubbish of tenacity of its residents. It was due to cultural nationalism that the modern era in India led to Arunodaya and that the past was preserved and the wisdom of nationalism erupted in the Sushka masses.

Arjun Tiwari has written the truth that it was due to the harassment of the Firangi that a group of revolutionaries arose, by whom the rant of the rebellion was recited. Inspired by the letters and documents of great men, the Indians ignited cultural nationalism and ignited the fire of renaissance.

मुख्य शब्द : सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, राष्ट्रवादी आंदोलन, आंतरिक समरसता, स्वतंत्रता की सीढ़ियां, प्रजातीय राष्ट्रीयता, देश प्रेम की अध्यात्मिक साधना, स्वदेशी, बहिष्कार, और राष्ट्रीय शिक्षा

Cultural Nationalism, Nationalist Movement, Internal Harmony, Stairs of Freedom, Ethnic Nationality, Spiritual Cultivation of Country Love, Swadeshi, Boycott, and National Education

प्रस्तावना

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद द्वारा राष्ट्रीय जागृति पैदा करना ही इस लेख का मुख्य उद्देश्य है जैसाकि अरविन्द ने स्पष्ट लिखा है– ''राष्ट्रीय जागृति का कार्य एक महान् एवं पवित्र यज्ञ हैं जिसकी प्राप्ति बहिष्कार, स्वदेशी और राष्ट्रीय शिक्षा द्वारा की जा सकती है। मातृभूमि वह देवी है जो आहुति चाहती है, उस त्याग, बलिदान रुपी आहुति से स्वतंत्रता प्राप्त हो सकती है जो राष्ट्र की माँग है।''[3]

राष्ट्रीयता जो सांस्कृतिक राष्ट्रवाद से आती है केवल एक राजनीतिक कार्यक्रम मात्र नही है, वरन् राष्ट्रीयता एक धर्म है। इस धर्म के प्रति अपनी स्वीकृति देकर मातृभूमि को माता तथा देवी मानकर उसके सम्मुख सब कुछ बलिदान करने का संकल्प ही राष्ट्रीयता एवं जागरण हैं। डॉ0 अर्जुन तिवारी का कथन भी सत्य के निकट है ''कि राष्ट्रीयता ने भारत के लिए एक नया विश्वास पैदा किया और पुनरुत्थान के पीछे जो भावना कार्य कर रही थी। वह राष्ट्रीय भावना थी। इसी कारण देश के बड़े से बड़े लोगों की सेवायें प्राप्त हुई और भारतीय तरुणों के उत्साह में वृद्धि इसी सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के कारण हुई।''[4]

''भारत में आधुनिक राष्ट्र के रूप में जनसंगठन की चेतना और एकीकरण के भाव 19वीं सदी के पुनरूत्थान काल में ही उत्पन्न हुए। राष्ट्रीयता भारत के लिए नवीन विश्वास था। यद्यपि प्राचीन भारत में भी प्रबुद्ध राष्ट्रीयता की प्रामाणिक सामग्री और उसके अनेक उपकरण, देशभक्ति, भौगोलिक, सांस्कृतिक अखण्डता, भाषा–धर्म की मूल एकता, प्रचुर मात्रा में थी लेकिन लोकमानस की जड़ता इसी सदी में टूटी। भारतीय राष्ट्रवाद पश्चिम के पुनर्जागरण, धर्म सुधार आन्दोलन एवं औद्योगिक क्रान्ति से उभर कर सामने आया तथा इसने राष्ट्रवाद के आधुनिक रूप की रचना की। आधुनिक राष्ट्रवाद के विकास में बुद्धिजीवियों की भूमिका निर्णायक रही उन्होंने जनता को संगठित करके अनेक प्रगतिशील, सामाजिक, धार्मिक सुधार आन्दोलनों का शुभारम्भ किया।''[5]

राष्ट्रवाद राष्ट्र की आत्मा और जीवनी शक्ति को पुनर्जागृत करने का सशक्त माध्यम है। ''वह राष्ट्रीय जीवन की समस्त गतिविधियों, अनुभवों, अनुभूति, जागृति और पतन का दर्पण होती है, तथा राष्ट्र के सुख, दुःख में दुविधा रहित होकर शामिल होती है और यही राष्ट्र के हितों की जागरूक रक्षक एवं राजनीतिक चेतना की अग्रदूत है। वास्तव में भारतीय राष्ट्रवाद के विकास की कहानी, भारतीय राष्ट्रीयता के विकास की कहानी है, जो सुशासन से स्वशासन, स्वराज्य से पूर्ण स्वतंत्रता की यात्रा क्रमशः विकसित राजनीतिक चेतना के प्रस्फुटन का इतिहास है।''[6]

''भारत में 19वीं सदी में जो राष्ट्रीय अस्मिता और भारत माता की अवधारणा उभरी थी, वह भारतीय राष्ट्रवाद के कारण थी। जिसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध, निज भाषा, निज संस्कृति, निज उत्पादन अस्मिता के उन्नयन और स्वाधीनता के प्रश्न से जुड़ा हुआ था।''[7]

''भारत में इस समय अधिक से अधिक भारतीय बनने की माँग अधिक से अधिक धार्मिक, सामाजिक सुधार और अतीत के सांस्कृतिक गौरव के प्रति जागरूक, सम्माननीय अभिव्यक्ति, तत्कालीन जागरण राष्ट्रीयता के ही प्रारूप थे। राजनीतिक चेतना जागृत करने के लिए जनसामान्य और औपनिवेशिक अर्थतंत्र एवं शोषण, दोहन का ज्ञान कराना और उनके विरूद्ध वातावरण पैदा करना राष्ट्रीय चेतना के विकास का अनिवार्य अंग था।''[8]

वास्तव में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद क्रमशः विकसित राजनीतिक चेतना के प्रस्फुटन का इतिहास है, जो राष्ट्र की आत्मा और जीवनी शक्ति को पुनर्जागृत करने का सशक्त माध्यम है। ''वह राष्ट्रीय जीवन की समस्त गतिविधियों, अनुभवों, अनुभूति, जागृत और पतन का दर्पण होती है, तथा राष्ट्र के दुःख, सुख में दुविधा रहित होकर शासित होती है, इसीलिए उसकी गहरी सहानुभूति, सहभागिता और आस्था अपने देश की जनता के साथ होती है, न कि शासकों के प्रति, वहीं राष्ट्र के हितों की जागरूक रक्षक एवं राजनीतिक चेतना की अग्रदूत है।''[7]

राष्ट्रवाद आधुनिकीकरण का उन्माद है तथा राष्ट्रवादी आन्दोलन इसी उन्माद का प्रमाण है। जिस प्रकार इटली के नव–जागरण तथा जर्मनी के सुधारवाद द्वारा यूरोपीय राष्ट्रवाद विकसित हुआ, उसी प्रकार भारत में बौद्धिक एवं सांस्कृतिक पुनर्जागरण से आधुनिक भारतीय राष्ट्रवाद का प्रारम्भ हुआ। भारतीय राष्ट्रवाद पुनर्जागरण के साथ विभिन्न स्तरों पर विकसित हुआ था। 'सन् 1815 से 1871 ई0 तक इसका रूप एकीकृत राष्ट्रवाद, सन् 1871 से 1890 ई0 तक असामान्य राष्ट्रवाद तथा 1900 ई0 से 1945 ई0 तक आक्रामक राष्ट्रवाद विकसित होता रहा। भारत का राष्ट्रवाद मूलतः सांस्कृतिक राष्ट्रवाद है। सामाजिकता के तत्व के लगातार, रसमय, सत्यम, आनन्दमय और आत्ममय, एकात्ममय बनाने का मनुष्य कर्म ही संस्कृति है। संस्कृति आत्मपरक, सत्यशोधक, आन्तरिक समरसता का प्रवाह है। भारत का संस्कृति शब्द संस्कृत भाषा से आया जिसका अर्थ परिष्कृत, परिमार्जन, शुद्धि आदि से है और यही सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को जन्म देकर नवोत्थान करती है।''[10]

संस्कृति विचारधारा से नहीं बनती, वरन अरस्तू, प्लेटों ओर अलेक्जेंडर का ग्रीक राष्ट्र न मरता। वहाँ दर्शन था, विचार था, योग्यता थी, पर सांस्कृतिक राष्ट्रवाद नदारद था। रूस के साथ भी यही हुआ, रूस एक राज्य था, जार गया, राज्य व्यवस्था ने लाल चादर पहना, कामरेड सांस्कृतिक राष्ट्रवाद मानते नहीं। रूस के पास

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद नहीं था। सोवियत रूस बिखर गया। लेकिन भारत के साथ ऐसा नहीं हुआ। भारत सारी दुनिया से सद्विचार लेने को आज भी तत्पर रहता है। ''हम भारतीयों के लिए सनातन धर्म ही राष्ट्रवाद है, धर्म के साथ यह राष्ट्रगति करता है। गीता में कृष्ण ने भी यही बात कही है ''धर्म की ग्लानि के साथ सज्जन कष्ट पाते है, तब परमसत्ता अवतरण करती है। भारत आस्था का देश है एवं संशय की भावभूमि में सत्य का खोजी भी और तार्किक विचार सारिणी में चलता है तथा जगत की कोटि–कोटि विविधताओं और सहस्त्रों आयामी किरणों को स्वीकारता है। इस तरह हमारा राष्ट्र सांस्कृतिक आत्मा से युक्त है।''[11]

1857 ई0 में अंग्रेजों के विरूद्ध छेड़े गये संग्राम के पूर्व जनसंघर्ष की चेतना जगाने के लिए रोटी के साथ साथ कमल को प्रतीक के रूप में चुनना, हमारी सांस्कृतिक चेतना के कारण ही सम्भव हो सका था, कंधे से कंधा मिलाकर हिन्दू मुस्लिम, अंग्रेजीराज को उखाड़ने के लिए दृढ़ संकल्पित था, लेकिन समर में विफल होने के कारण जनता में व्यापक हताशा फैली थी। ''राष्ट्र को इस हताशा से उबारने के लिए पुनः एक बार हमारी सांस्कृतिक चेतना ही सक्रिय हुई। राजा राम मोहन राय, दयानन्द सरस्वती, विवेकानन्द, श्री अरविन्द, स्वामी राम तीर्थ आदि महान पुरूषों ने भारतीय संस्कृति के उज्ज्वल पक्षों को उभारकर और विकृतियों को नकार कर पुनः देश में नवजीवन का संचार किया था।[12]

भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन के जो भी सहिंस और अहिंस आन्दोलन ऋषि चंकिम, विवेकानन्द, लोकमान्य तिलक, श्री अरविन्द, महात्मा गांधी, विनोवा भावे द्वारा चलाये गये, सभी गीता के सार से प्रेरित तथा अनुप्राणित थे। ये सभी स्वाधीनता आन्दोलन के प्रणेता क्षेत्रीयता के स्थान पर राष्ट्रवाद के व्यापक स्वरूप को जनता के सम्मुख प्रस्तुत कर घोर आत्मत्याग का परिचय देकर तत्कालीन शासन से उदास और निराश जनता को जीवनदान प्रदान किया। वन्देमारतम् पत्र के माध्यम से 1906ई0 में विपिन चन्द्रपाल ने घोषणा की ''कि अब समय आ गया है कि हम अब अपनी राजनीतिक प्रगति और मुक्ति के प्रयत्न में अंग्रेजों के निर्देशन से और अधिक पीड़ित नहीं होना चाहते। वे ब्रिटिश शासन को कायम रखकर यश प्राप्त करना चाहते है, हम भारत को ब्रिटिश पराधीनता से स्वतंत्र एवं मुक्त करना चाहते है। पूर्ण स्वतंत्रता ही स्वदेशी आन्दोलन का आदर्श है जिससे सांस्कृतिक राष्ट्रवाद तीव्र हुआ।''[13]

सांस्कृतिक जागरण के क्षेत्र में भारत का आत्माभिमान स्वामी दयानन्द में बिखरा। रूढ़ियों और कुरीतियों में फँसकर अपना विनाश करने के कारण भारतवासियों की कड़ी निन्दा करते हुए कहा कि तुम्हारा धर्म पौराणिक संस्कारों की धूल में छिप गया है। इन संस्कारों की गन्दी पर्तों को तोड़ फेकों। तुम्हारा सच्चा धर्म वैदिक धर्म है, जिस पर आरूढ़ होने से तुम फिर से विश्वविजयी हो सकते हो। अपनी प्राचीन परम्परा के गौरव के अनुभव से ही हमें विदेशी शासन से त्राण मिल सकेगा।[14] दयानन्द ने अपने सत्यार्थ प्रकाश द्वारा रूढियों और अंधविश्वासों की जमी पर्तो को धीरे–धीरे तोड़ने का काम किया तथा लोगों में राजनीतिक चेतना जागृत कर अविचल उदासीनता की मनोवृत्ति को समाप्त किया।[15] दयानन्द ने हिन्दुओं के धर्म के अपमान के रक्षार्थ प्राणोत्सर्ग की न, केवल शिक्षा दी, वरन जनमानस को जगाकर उन्हें प्रगतिशील करने तथा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की ओर बढ़ने का पाठ पढ़ाया।[16]

इस देश में रहने वाले हमारे सबके पुरखे, संस्कृति व वतन साझाँ है, हम विदेशों में मजहब से नहीं वतन से जाने जाते है। राष्ट्रीयता का आधार मजहब नहीं वतन होता है। मातृभूमि की सेवा किये बिना कोई भी आत्मानुभूति की चरम स्थिति का अनुभव नहीं कर सकता। हिन्दू ईसाई, आर्य समाजी, पारसी, सिक्ख, मुसलमान ये सभी मेरे स्वरूप है, मेरे भाई. जिनकी मांसपेशियाँ, हड्डियाँ खून और मस्तिष्क मेरे इस्टदेव, मेरे भारत के खेतों में लहलहाते अनाज और धरती पर कुलांचे भरती पावन नदियों से बने हैं। इसी भावना के विकास से ही भारत स्वतंत्रता की सीढ़ियों पर अग्रसर हुआ था।[17]

शिक्षा के विकास एवं प्रार्दुभाव द्वारा ही भारत में एक ऐसी भावनात्मक दशा बनी, जिसके द्वारा पूरे राष्ट्र में सामूहिक एकता का संचार हुआ। ''भारत ही नहीं पूरे एशिया और अफ्रीका में राष्ट्रवाद जो साधारणतः यूरोपीय प्रभुत्व के विपरीत एक प्रतिक्रिया थी, जो राजनीतिक आर्थिक शोषण के विरूद्ध उतनी नहीं थी, जितनी यूरोपीय राष्ट्रों के द्वारा उनके विचारों के बहिष्कार के प्रति बौद्धिक वर्ग की भावनात्मक प्रतिक्रिया थी। शिक्षा ने राष्ट्रवाद को पोषित करके विभिन्नता में एकता की भावना को दृढ़ किया। इसने साम्राज्यवाद और उपनिवेशवाद की व्यवस्था के विरूद्ध बिगुल बजाया।''[18]

''आधुनिकीकरण के संक्रमण काल में सांस्कृतिक वर्गों में भी राजनीतिक महत्वाकांक्षायें, पनपने लगी और वे प्रजातीय राष्ट्रीयता को जन्म देने लगी।''[19]

''राष्ट्रीय नवनिर्माण की चेतना विभिन्न स्तरों पर प्रस्फुटित हुई। आन्तरिक संस्कृतियों के समन्वय और बाह्य प्रजातियों के भारतीयकरण से समग्र भारत को एक परिधि में लाने का प्रयास किया गया। राजाराम मोहन राय ने जनता को आगाह करते हुए कहा कि धर्म का सार संस्कारों कर्मकाण्डों के अज्ञान से भरे अनुष्ठान में नहीं है, न धर्म मतों व अंधविश्वासों का आँख मूंदकर पालन करना, धर्म का वास्तविक सार है वरन व्याप्त बुराइयों और कुरीतियों को उजागर कर लोगों में सांस्कृतिक जागरण पैदा करना ही धर्म है।''

1917 ई० में कलकत्ता कांग्रेस के अपने अध्यक्षीय भाषण में एनीवेसेन्ट ने गर्जना करते हुए कहा था ''युग–युग से भारत न्याय, कर्त्तव्य, क्षमता तथा सम्यक् व्यवस्था एवं सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का समर्थक रहा है। क्या विश्व में ऐसा कोई देश है, जिसकी आध्यात्मिकता के लिए हमारे मन में उतना प्रेम जाग्रत होता हो, जिसके साहित्य के लिए इतनी प्रशंसा और शूरत्व के लिए इतनी श्रद्धा उत्पन्न होती हो, जितनी राष्ट्रों की इस गौरवमयी जननी भारतीयता के लिए, जिसकी कोख से वे जातियाँ उत्पन्न हुई जो आज यूरोप तथा अमेरिका से विश्व का नेतृत्व कर रही है।''[21]

प्रो0 विपिन चन्द्र का कथन सत्य के निकट है ''राष्ट्रवाद एवं नवोत्थान के कारण भारत में नये वर्गों के उदय के साथ, क्रांतिकारी परिवर्तन आया और देश में क्षेत्रीयतावाद के स्थान पर राष्ट्र का व्यापक स्वरूप सामने आया, जिसमें राजनीतिक भावना के विकास के साथ ही प्रेस, यातायात के साधनों, कृषि में नयी भूमि व्यवस्था आदि से पुराने ढाँचे में परिवर्तन आया जो प्रगति का सूचक एवं उद्धारक था।''[22] व्यापक रूप में आधुनिकता, राजनीति, धार्मिक सामाजिक मान्यतायें परस्पर अन्योन्याश्रित तथा पूरक है। इसने जीवन को समग्र मानक राष्ट्रीय भावना को विस्तृत फलक प्रदान किया है। सब उन्नतियों का मूल धर्म है तथा राष्ट्रीयता का मूलाधार है। इसी ने क्लेशकर तथा निराशाजनक काल में भारतीयों के हित में विभिन्न सुधार तथा प्रगति की ज्योति जगाकर स्वतंत्रता का दीप जलाया।[23] 19वीं शताब्दियों में हमारे राष्ट्र की आशाओं और आकांक्षाओं को वाणी देने वाले हमारे अपने पत्र तथा पत्रकार ही थे जिन्होंने जन–जन को राजनीति की दिशा दिखाई तथा संस्कृति के गौरव का स्मरण कराया। इस प्रकार भारतीय पत्रकारिता इस युग को इतिहास का केवल प्रमाणिक दस्तावेज ही नहीं वरन् समसामयिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक चेतना तथा राष्ट्रवाद की संवाहिका भी थी। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के अलख को जगाने के लिए तिलक के पास केसरी तथा मराठा जैसे दो सशक्त हथियार थे जिनसे उन्होंने स्वतंत्रता को प्रदीप्त किया ''तिलक की निर्भीक लेखनी और वाणी ने समाज की जड़ता को तोड़ा एवं स्वराज्य प्राप्ति की तीव्र ललक को जन–जन के हृदय में प्रज्ज्वलित किया। स्वराज्य संघर्षों के कंटकाकीर्ण पथ से गुजरने से ही प्राप्त होगा।''[24]

बीसवीं सदी के प्रथम दशक के दौरान तिलक ने अपनी लेखनी द्वारा राजनीतिक अधिकारों की अमिट लालसा भारतीय जनता में जागृत किया और कहा ''राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति भीख माँगने से नहीं मिल सकती। यदि जनता को अधिकार अथवा शक्ति चाहिए तो वह स्वयं अर्जित करनी पड़ेगी, जिसके लिए संघर्ष आवश्यक है।''[25]

तिलक ने कहा ''इतिहास साक्षी है कि गुलाम जनता कितनी भी असहाय क्यों न हो, वह एकता, साहस और दृढ़ निश्चय एवं सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के बल पर हथियार उठाये बिना ही अपने मदोन्मत्त शासकों को परास्त कर सकती है। भारत में राजनीतिक दर्शन को अपनी लेखनी से तिलक ने स्वर्ग से धरती पर उतारा, विधान सभा तथा कांग्रेस के मण्डप से उतार कर उसे सड़क और बाजार में पहुँचाया।''[26]

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की धारणा तिलक की अद्भुत देन थी, जिसकी मौलिकता को अरविन्दलाला लाजपतराय, विपिन चन्द्र पाल, टैगोर, गांधी, नेहरू ने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया। जहाँ अरविन्द के दर्शन में राष्ट्रवाद एक आध्यात्मिकता साधना तथा तात्त्विक व समानता का उद्घोष है, जहाँ टैगोर के दर्शन में राष्ट्रवाद, राजनीतिक चेतना व सामाजिक चेतना के सच्चे समन्वय का नाम है। वहीं तिलक ने राष्ट्रवाद को किसी राष्ट्र की सांस्कृतिक अस्मिता की पहचान से जोड़ा और ''भारतीय राष्ट्र को मात्र भावनात्मक एकता की एक संगठित इकाई नहीं मानाबल्कि धर्म, संस्कृति और अध्यात्मक का एक समन्वित प्रवाह माना।[27] जनमानस में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की भावना जगाने के लिए ही तिलक ने 1893ई0 में गणपति उत्सव, 1895ई0 में शिवाजी उत्सव की नींव डाली। ये दोनों प्रयोग जनता में राष्ट्रवादी भावनाओं को जगाने के दिशा में सफल प्रयोग थे। बम्बई में तिलक ने केसरी और मराठा के माध्यम से लोगों को न केवल नई दृष्टि दी वरन् राष्ट्रीय मुक्ति के लिए अखिल भारतीय आन्दोलन चलाकर बहिष्कार, स्वदेशी और राष्ट्रीय शिक्षा को मुख्य आधार बनाकर अंग्रेजों में दहशत और आतंक का वातावरण तैयार किया। स्वराज्य की प्राप्ति भारतीय राष्ट्रवाद की एक महान् विजय होगी तथा 'स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।' इसको माले की तरह जपना होगा।''[28]

अध्ययन का उद्देश्य

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद एक समान रुचि भाषा संस्कृति के रूप में उभरा हुआ राष्ट्रवाद है जो भारतीय जनमानस में देशभक्ति तथा राष्ट्रप्रेम की भावना को जागृत करने के लिए आवश्यक है।

निष्कर्ष

मौलाना अबुल कलाम आजाद ने वास्तव में सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का पोषण किया और अपने पत्र 'अलहिलाल' की लेखनी से देश के एक कोने से दूसरे कोने में आग लगा दी तथा एक सोयी और सहमी आबादी को जगा दिया एवं कसक एवं चुभनदार भावनायें उत्पन्न कर युवा पीढी में बलिदानी भाव उत्पन्नकर, आजादी की लड़ाई का सूरमा बना दिया। आजाद ने स्पष्ट कहा ''मैं गर्व के साथ महसूस करता हूँ कि मैं हिन्दुस्तानी हूँ। मैं हिन्दुस्तान की एक अविभाज्य राष्ट्रीयता का एक अंश हूँ। मुसलमान भी हिन्दुस्तान में रहते हैं। हिन्दुस्तान की खिदमत करना उनका दीनी फर्ज है।''

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में मौलाना आजाद एक शिखर पुरूष के रूप में तथाहिन्दू–मुस्लिम एकता के पुरोधा के रूप में राष्ट्रवाद का अलख जगाकर राष्ट्रीय आन्दोलनों में प्रमुख दायित्वों का निर्वहन किया तथा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को पुष्पित, पल्लवित करते हुए,देशप्रेम, स्वतंत्रता, उन्नति का भाव लोगों में भरते रहे। उन्होंने उस समय की राजनीतिक गुलामीतथा वैचारिक अन्धकार से लोगों को मुक्त किया। उन्होंने अंधकार के क्षणों में नवीन पीढ़ी कोप्रकाश प्रदान किया और मानवतावादी दृष्टिकोण अपनाने की सलाह सभी हिन्दुस्तानियों को दी।

अन्ततः यह कहना अनुचित न होगा कि राष्ट्रीयता एक सामान्य रूचि, सामान्य भाषा,सामान्य संस्कृति, इन सबको लेकर बने हुए सामान्य विचार जो एकता पर आधारित होती है कोलेकर सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के रूप में अभिव्यक्ति होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *अर्जुन तिवारी, पृ0 30।*
2. *अर्जुन तिवारी, पृ0 30।*
3. *अरविन्द – द डाक्ट्रिन ऑफ रेसिटेन्स, 1948, पृ0 7।*

4. डॉ0 अर्जुन तिवारी – स्वतंत्रता संग्राम की पत्राकरिता और पं0 दशरथ प्रसाद द्विवेदी 1988, पृ0 29।
5. ए0आर0 देसाई – भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि–मैकमिलन, नई दिल्ली–1977, पृ0 1–2।
6. ए0आर0 देसाई – वही, पृ0 247।
7. ए0आर0 देसाई – वही, पृ0 249।
8. गिरधर गैरोला –भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास दिल्ली, 1988, पृ0 61।
9. प्रवीण दीक्षित – जनसम्पर्क और हिन्दी पत्रकारिता, कानपुर, 1980, पृ0 13।
10. कार्टन एच0हेज–एसेज आन नेशनल्जिम, न्यूयार्क–1941, पृ0 3।
11. हृदय नारायण दीक्षित–राष्ट्र सर्वोपरि–लोकहित प्रकाशन, लखनऊ–2003, पृ0–15।
12. वही, पृ0 17।
13. श्री अरविन्द – द डाक्ट्रिन ऑफ रेसिस्टेन्स, आर्य पब्लिशिंग हाउस कलकत्ता–1948, पृ0 77
14. आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री – वचन पत्रिका, 3 अक्टूबर 2003, कटरा, इलाहाबाद, पृ0 210।
15. शास्त्री, वही, पृ0 210।
16. विपिन चन्द्रपाल – वंदेमारतम् एवं इंडियन नेशनलिज्म, पृ0 23।
17. रामधारी सिंह दिनकर – संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 1993, पृ0 554।
18. वही, पृ0 555।
19. वही, पृ0 561।
20. सुषमा पाचमोर – राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में भारतीय मुस्लिम, काश्मीरी गेट, दिल्ली।
21. एलो कैडोरी–नेशनलिज्म इन एशिया एण्ड अफ्रीका लंदन, 1971, पृ0 141।
22. वही, पृ0 142।
23. ए0आर0 देसाई – वही, पृ0 127।
24. एनीवेसेन्ट– पत्र न्यू इंडिया 27 सितम्बर–1917।
25. प्रो0 विपिन चन्द–भारत का स्वतंत्रता संघर्ष–हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय नई दिल्ली, पृ0 425।
26. बाबूराम जोशी–भारतीय नवजागरण का इतिहास, नई दिल्ली, 1954, पृ0 78।
27. एन0जी0 जोग– लोकामन्य बाल गंगाधर तिलक, प्रकाशन विभाग, दिल्ली, पृ0 17।
28. नरसिंह चिंतामणि केलकर–लोक मान्यतिलक का चरित्र, खण्ड–एक, पुणे 1927, पृ0 510।